International Journal of Professional Development
Vol.10,No.1,Jan-June2021 ISSN: 2277-517X (Print), 2279-0659 (Online)
Impact Factor: 3.017(IFSI

महात्मा गांधी और डा.बी.आर.अम्बेडकर का दलित उद्धार में योगदान

Krishan Lal
Asstt. Prof., Department of Political Science
K.T. Govt. (PG) College, Ratia (Fatehabad)

सार

विश्व के विभिन्न समाजों के इतिहास में संघर्ष सवर्दा व्यास रहा है। संघर्ष का सामान्य कारण असमानता और शोषण में निहित है। यह संघर्ष रंग, नस्ल, धर्म, लिंग, भाषा, वर्ग और जाति के आधार पर रहा है। भारतीय समाज भी इसका अपवाद नहीं है सामाजिक विशमता हमारे समाज की एक अत्यन्त व्यापक और गंभीर समस्या हैं। भारत में विशमता सिर्फ संरचनात्मक नहीं है। बल्कि दीर्घ काल से प्रचलित रहने के कारण वह एक सभ्यागत समस्या बन गई है। जातिगत ऊँच–नीच और स्पृश्य–अस्पृश्य की धारणा भारतीय समाज की रग–रग में समाई है। अछूत जिसकी छाया मात्र से रुढ़िवादी हिन्दु अपवित्र हो जाते थें। से हरिजन बहुजन और दलित की यात्रा बहुत लम्बी विरोधाभासी, दुखित और कश्टप्रद रही है। यह षब्द और श्रेणी संसार के दिशाहीन और निष्किय प्रतिनिधि नहीं है। अपितु नहीं है अपितु चेतन रचनाएं है। जिनका सकारात्मक अथवा नकारात्मक कार्यकम होता है दलित और उनका उद्धार न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी शैक्षणिक बहस का सिस्सा बन चुकी है इस दृष्टि से सम्बन्धिक विषय पर शोध न केवल वांछनीय है अपितु अनिवार्य भी हो गया है।

कीवर्डः महात्मा गांधी, डा.बी.आर.अम्बेडकर, दलित उद्धार

परिचय

दलित सदियों से सामाजिक तौर पर अछूत, आर्थिक रुप से वंचित, राजनैतिक रुप से विखण्डित और धार्मिक रुप से असमान थे। उनके शोषण की समस्या जितनी विकाल है उनके संतों सुधारकों तथा विभिन्न सामाजिक आन्दोलनो तथा राजनैतिक दलों ने इनके सुधार का बीड़ा उठाया परन्तु उनके उद्धार की योजना महात्मा गांधी और बी.आर.अम्बेडकर की तरह कमबद्ध, सैद्धांन्तिक एंव सशक्त नहीं थी। परन्तु उन्होंने समाज में एकता एंव सौहार्द पूर्ण वातावरण बनाने तथा दलितों में चेतना लाने में अहम भूमिका निभाई। भूमण्डलीयकरण और उदारीकरण के दौर में सत्ता की अवसरवादिता के कारण जाति एंव धर्म के प्रति जैसा उन्माद वर्तमान समय में दिखाई दे रहा है। नैतिक मूल्यों का जिस तेजी से क्षरण हो रहा है सदभाव, भाईचारा, प्रेम व सदभावना के प्रति जो लोगों की आस्था गिरती नजर आ रही है ऐसे में गांधी जी के विचाार उनकी प्रजातांत्रिक गणराज्य में आत्मत्व की पुनः स्थापना अन्य नागरिकों के समान उपेक्षितों को समाज बराबरी का दर्जा दिलाना प्रसांगिक हो जाता है।

दूसरी ओर अम्बेडकर निम्र वर्ग के लोगों की तरह स्वंय भी तत्कालीन समाज में व्यास सामाजिक अन्याय के शिकार रहे, उन्होंने भारतीय समाज का बौद्धिक विश्लेषण किया एंव समाज में व्यास बुराईयों को उजागर करके उनके निराकरण हेतु विकल्प दिये । उन्होंने व्यक्ति के जीवन को मानवीय एंव यथार्थ रुप में समझने वे देखने का प्रयास किया। उन्होंने भारतीय समाज के उस वर्ग को जो सदियों से वंचित रखा गया। उनके कल्याण हेतु स्वतन्त्रता समानता और बन्धुत्व के पवित्र आधार स्तम्भों पर संसार के श्रेष्ठ संविधान की रचना में सहयोग दिया। उन्होंने (बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय) के सिद्धांत का नारा सर्वप्रिय बनाया। अम्बेडकर ने अपने चिन्तन में ऐतिहासिक महत्ता दी। यथार्थवादी पद्धति को अपना कर उन्होंने भारतीय समाज में व्यास उन मूल्यों में परिवर्तन की आवष्यकता मानी, जिनका वर्तमान में अभाव है।

दलित उद्धार के विषय में अम्बेडकर एंव महात्मा गांधी के दृष्टिकोण में सहमती एंव विवाद के बिन्दु विद्यमान है। अम्बेडकर ने गांधी की इस बात की प्रशंसा की है। कि उन्होंने हिन्दु होते हुए भी अस्पृश्यता निवारण और सामाजिक उत्रयन के लिए अपने संघर्ष के कार्यकमों में स्थान दिया। किन्तु अम्बेडकर का गांधी और कांग्रेस के प्रति प्रमुख आक्षेप यह था। कि उन्होंने सामाजिक लोकतन्त्र की स्थापना के लिए जो प्रयास किये, उनकों वांछित प्राथमिकता प्रदान नहीं की। अम्बेडकर का मत था कि भारत में सामाजिक लोकतन्त्र की स्थापना राजनैतिक स्वतन्त्रता प्रास करने की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण थी। जबकि महात्मा गांधी राजनैतिक स्वतन्त्रता को प्रधान मानते हुए सभी विषयों पर समान एंव समग्र दृष्टिकोण अपनाने पर जोर देते थे। इन दोनो का लक्ष्य एक होते हुए भी इन दोनों के स्वभाव, आस्थाओं, विचारों, संवादशैली, संघर्ष शैली में विभित्रता थी। अनेक सामाजिक प्रश्नों एंव प्रसंगों पर दोनों में न सिर्फ मतभेद रहे बल्कि संघर्ष एंव टकराव भी हुए। मतभेद किन कारणों से थे उन्हें सन्दर्भ सहित खोजने का प्रयास प्रस्तुत शोध में किया गया है।

गांधी और अम्बेडकर के दलित उद्धार को लेकर हाल ही में एक नई बहस आरम्भ हो गयी हैं। इस बहस के सूत्रधार राजनीतिज्ञ हैं तथा विभित्र राजनैतिक दलों से सम्बद्ध हैं। उनका आरोप है कि गांधी ने दलितों को हरिजन कह कर उनका अपमान किया है तथा गांधी ने मैक्डोनाल्ड अवार्ड के अर्न्तगत दलितों को दिये जाने वाले पृथक निर्वाचन को रुकवाने के लिये आमरण अनशन किया जो गांधी पर ऐसा आरोप लगा रहे हैं। उनके द्वारा दिया गया। यह नारा भी प्रमुख है कि (दलित मुस्लिम भाई–भाई, हिन्दु जाति कहां से आई)। इस वर्ग का आरोप है कि गांधी चतुरवाणिक थे। जिन्होंने उच्च वर्ग के संसाधनो के बल पर राष्ट्रीय आन्दोल में अपना अग्रणीय स्थान बनाया। गांधी जी पर यह राजनीति से परिपूर्ण मिथ्वा आरोप ना समझी की साजिश है। वे इस बहस के माध्यम में पिछड़ो का समर्थन प्राप्त कर सत्ता में आने का प्रयास कर रहे हैं। महात्मा गांधी की राष्ट्रीयता की छवि तोड़ कर दलितों के महीसा अम्बेडकर को उनको ऊँचा दिखाने की चेष्टा करके दलितों का समर्थन और वोट बटोरने की उनकी योजना है। महापुरुषों की इस छींटाकाशी में किसकों कितना लाभ होंगा। यह एक अलग प्रश्न है । परन्तु कीचड़ उछालने वालों की विकृत मनोस्थिति जरुर उजागर होगी। अम्बेडकर बनाम गांधी एक बेबुनियाद विवेकहीन एंव निरर्थक बहस है। क्योंकि दोनों ही दलितोत्थान में मनसा–वाचा–कर्मणा ने जुड़े हुए थे। राजनैतिक दलों द्वारा उत्पत्र की जा रही है भ्रमपूर्ण एंव दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति ने हमें इनके बारे में गहन अध्ययन करने पर प्रेरित कर दिया। इस दृष्टि से एक वस्तुनिष्ठ अध्ययन हेतु सतग्रता से विश्लेशन करने के लिए गांधी और

www.ijpd.co.in

अम्बेडकर के चिंतन और कार्यों का पुनः मुल्यांकन करना महत्वपूर्ण कार्य बन गया है। इन्हीं उद्देश्य और भ्रान्तियों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में दलित उद्धार में गांधी और अम्बेडकर के विचारों की सुस्पष्ट समीक्षा एंव व्याख्या करते हुए उनकी भूमिका एंव सार्थकता स्थापित करने हेतु एक विनम्र प्रयास किया गया है।

समाजिक विषमता हमारे समाज की एक अत्यन्त व्यापक और गम्भीर समस्या है। जातिगत ऊँच–नीच और स्पृश्य की धारणा भारतीय समाज की रग–रग में समाई है। भारतीय राजनीति में दलित राजनीति के बढ़ते हुये प्रभाव के कारण इस बात की आवश्यकता है। कि दलित अवधारणा के विशय में जो बड़ी मात्रा में भ्रम और मतभेद आदि विद्यमान हैं। उनको ठीक प्रकार से समझा जाए, इस अध्याय में इसी लक्ष्य की प्राप्ति का प्रयास किया गया है। अम्बेडकर ने 1948 में प्रकाशित पुस्तक 'दी अनटचैबल्स' में इन्हें भग्र पुरूष और बाद में अस्पृश्य की अपेक्षा दलित कहा । महात्मा गांधी ने पीड़ित और शोषित वर्ग को 'हरिजन' की संज्ञा दी। परन्तु कल का हरिजन आज अपने आप को दलित कहता ह। अन्य जातियां भी अब इन्हें दलित कहने लगी हैं क्योंकि दलित षब्द ने केवल उनकी पूरी स्थिति का निचोड़ है बल्कि संघर्ष की भी प्रेरणा देता है। यह शब्द कोध और आकोश का भी परिचायक है। दलित शब्द नया नहीं है। इस शब्द का प्रयोग सबसे पहले 'चुल्लुबग्गा' में मिलता है।

परन्तु दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ क्या है ? इसका ऐतिहिासिक परिपेक्ष्य पथ क्या है? और इस श्रेणी तक ये कैसे पहुँचे ? क्या इसमें एक श्रेणी या श्रेणियों का समूह शामिल है ? क्या ये समान प्रकार के वर्गों में सहअस्तित्व और सहनशीलता की इजाजत देते हैं ? इसे लेखकों ने कैसे परिभाषित किया ? राजनीति के क्षेत्र में इस श्रेणी का राजनीतिक दलों द्वारा किस प्रकार प्रयोग एवं लाभ उठाया गया ? क्या ये राजनीतिक षक्तियों द्वारा मान्य होंगी ? अथवा अछूत बनी रहेंगी ? इन सब का वर्णन प्रस्तुत अध्याय में करने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय को दो भागों में बाँटा गया है।

- पहले भाग में दलित अवधारणा एवं संरचना का वर्णन किया गया है।
- दूसरे भाग में दलित उद्धार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन किया गया है।

दलित : अवधारणा एवं संरचना

दलित शब्द का अर्थ एवं व्याख्या :दलित शब्द की बौद्धिक और राजनैतिक यात्रा जटिल है। इसका विविध तरीकों से प्रयोग हुआ जो कि विरोधाभास से परिपूर्ण है। अतः प्रयोग में स्तरात्मक धारणा का परिचायक है। दलित शब्द की व्युत्पति संस्कृत धातु दल से हुई है। जिसका अर्थ है तोड़ना। हिस्से करना इत्यादि। मानक हिन्दी षब्द कोश में दलित शब्द के लिये डिप्रैस्ड क्लास शब्द का प्रयोग किया गया है। बी. आर. शिन्दे जो कि मराठा समाज सुधारक थे उन्होंने ने भी दलितों के लिए डिप्रैस्ड क्लास शब्द का प्रयोग किया। एस. एस. मेट जो कि 19वीं षाताब्दी के महाराष्ट्र के रहने वाले ब्राहमण समाज सुधारक थे। उन्होंने अस्पृष्य के स्थान पर अस्पृश्यता षब्द का प्रयोग किया संकुचित अर्थ में:

दलित का अर्थ निःसंदेह सामाजिक संगठनों में शोशित, पिछड़े अस्पृश्य और दबे कुचले समूहों से है जो निकृष्ट धंधों में लगे होते है। जिन्हें उच्च जाति के लोग शारीरिक सम्पर्क से अथवा अपवित्रता के सम्प्रेशण से अपने से दूर रखने का प्रयास करते हैं। तथ मनुवादी व्यवस्था में जिन्हें स्तर के आधार पर निम्न स्तर प्रदान किया गया है। आधनिक सालों में दलित शब्द के इस समुदाय के लोगों ने सामाजिक प्रतिकियात्मक श्रेणी कहकर नकारा और दलित के स्थान पर आपत्ति जताते हैं। उनके मत में यह शब्द या श्रेणी उन्हें अपना प्राचीन ऐतिहासिक बोझ ढोने पर मजबूर करती है। इसमें उनके आत्मसम्मान के हनन की गंध आती है। वे इसे मनुवादी व्यवस्था के प्रति किया कार्यकम का प्रतिरूप मानते है। वे यह भी तर्क देते है। कि दलित श्रेणी का प्रत्ययाश्रित आधार वर्ग है। यह सतरीकारण को न्यायोचित ठहराता है। यह सभी प्रयास दलित श्रेणी को नाकारात्मक और संकुचित रूप प्रदान करते हैं

दलित : गांधीवादी अवधारणा :

महात्मा गांधी ने दलितों के लिये 1933 में 'हरिजन' नाम दिया। हरि का अर्थ है। भगवान तथा जन का अर्थ है। बच्चे! अर्थात इसका अर्थ हुआ भगवान के बच्चे। महात्मा गांधी ने 11 फरवरी 1933 को हरिजन सप्ताहिक के प्रथम अंक में इस बात को स्पष्ट किया कि यह नाम उनका दिया हुआ नही है। गांधी जी तो हरिजन के अंकों में अस्पृष्यता शब्द का प्रयोग करते थे जिसका अर्थ अछूत होता है एक अछूत संवाददाता ने उन्हें हरिजन शब्द प्रयोग करने की सलाह दी। गांधी जी को यह नाम पसंद आया क्योंकि दुनिया के सभी धर्मों में भी भगवान को बेसहारों का सहारा, कमजोरों का पालन हार और दीनहीनों का सहायककर्ता बताया गया है। इस षब्द का प्रयोग सबसे पहले गुजरात के एक संत कवि नरसिंह मेहता जो जन्म से ब्राहमण थे ने किया वे अस्पृश्यों के बीच रहते, नाचते और गाते थे। और उनके उत्थान के लिये काम करते थे। लकिन अम्बेडकर तथा आज के युग में बहुजन दल के कुछ नेताओं ने निम्न आधारों पर इस शब्द के प्रयोग पर घोर आप्ति की है।

प्रथम तो वे हरिजन शब्द को आरोपित शब्द मानते है। क्योंकि यह अछूतों के अनुभवों से प्रवाहित नहीं हुआ अपितु गांधी जी ने कृत्रित रूप से अछूतों पर थोप दिया। यद्यपि इस शब्द से दैविक बोध होता है। परन्तु फिर भी सवर्ण हिन्दु अपने को अछूतों के साथ एकाकार नहीं कर पाये। द्वितीय इसके प्रयोग से उनकी स्थिति में कोई अन्तर नहीं पडा तथ्यों को छिपाने से यथास्थिति नहीं बदलेगी।

तृतीय यह शब्द दया का पतीक है और उनकी दीनता की स्थिती को प्रकट करता है इस शब्द के प्रयोग का इतना विरोध हुआ कि जब कांग्रेस ने हरिजन नाम को कानून का जामा पहनाना चाहा तो बम्बई की विधान सभा के सभी प्रतिनिधि विरोध में सदन से बाहर चले गये। यह दया के एक साथ एक कुप्रथा की ओर भी संकेत करता है। पहले हिन्दुओ के मन्दिरों में अनेक देवदासियां रहा करती थी। देव दासियां हिन्दु देवताओं की स्त्रियों को कहा जाता था। पूर्वकाल में अस्पृष्यों की सुन्दर लड़कियों का जवान होने से पहले ही भगवान को समर्पित कर दिया जाता था जो कि मन्दिरों के आसपास ही रहती थी। उनका यह कर्त्तव्य होता था। कि दिन में नाचती तथा गाती रहती तथा रात को वे भगवान के साथ सोती थी। अर्थात मन्दिर में पुजारी के साथ रात को उन्हें सोना होता था। इस प्रकार के रीति रिवाज के आधार पर देव दासियां शादी कर सकती थी। क्योंकि उनका अपले से ही भगवान के साथ विवाह हुआ होता था। वे देवदासियां मन्दिर के पुजारी के बच्चों को जन्म दे देती थी। इसके बच्चे पिताहीन होने के कारण इन्हें भगवान के बच्चे अर्थात हरिजन कहा जाता था। इस प्रकार दूसरे शब्दों में हरिजन का अर्थ है हराम की आलाक। भारतीय समाजवादी पार्टी की महासचिव मायावती ने गांधी जी पर आरोपों की बौछार करते हुये उन्हें दलितों का दुश्मन माना है वे यह भी कहती थी। कि यदि हरिजन ईश्रर की औलाद हैं तो क्या गांधी जी शैतान की औलाद थे। उन्होंने क्यों नहीं अपने नाम के आगे हरिजन लगाया।

परन्तु गांधी जा का मानना था कि अस्पृश्य अवर्ण आदि दिल दुखाने वाले घृणित नामों के स्थान पर तो हरिजन नाम अधिक अच्छा है। गांधी जी के समय में जो सामाजिक परिवेश था

उसमें दलितों को सिर्फ हेय ही नहीं बेंहद घृणा का पात्र समझा जाता था। उनकी करुणामय स्थिति को देखते हुये गांधी जी ने यहां तक कहा कि 'आगर उन्हें दुबारा जन्म लेना पड़े तो वे दलित के घर जन्म लेना चाहेंगे'। महात्मा गांधी ने 'अस्पृश्यता को हिन्दुओं का गुनाह माना है' जिस का अर्थ है 'एक जाति विषेश को स्पर्ष मात्र से होने वाले प्रदूषण का भय' उन्होंने कहा :

अस्पृश्यता हिन्दुत्व का अंग नहीं हैं यह तो हिन्दुत्व के शरीर पर निकला हुआ एक अतिरिक्त मांस पिंड है जिसे हर संभव कोशिश कर काट फैंकना चाहियं"।

महात्मा गांधी के अनुसार :

- अस्पृश्यता हिन्दु धर्म में घुसी हुई सड़न है, वहम है, पाप है, और इसका निवारण करना प्रत्येक हिन्दु का धर्म है उसका परम कर्त्तव है'।
- उन्होंने कहा कि 'आज हिन्दु धर्म पर एक अपरिमानवीय कलंक लगा हुआ है'। यह अनादिकाल से नहीं चला आ रहा। यक अस्पृश्यता का
- शर्मनाक जघन्य और अभिभूत करने वाला भूत हमारे पर अपने जातिय इनिहास के उस काल में सवार हुआ होगा। जब हम कालचक की गति में पतन की पराकाश्ठा तक पहुंच चुके थे और तब से अब तक हम पर सवार है।
- यह एक अभिशाप है और जब तक यह अभिशाप बनाप रहेगा तब तक सिवा यह मानने के कि इस पुण्य भूमि भारत में हमें जो भी कष्ट सहने पड़ रहें हैं वह इस बड़े पाप की सजा है और कोई चारा नहीं है। महात्मा गांधी कहते थे कि जब तक मह अपने समाज को इस अभिशाप को समाप्त नहीं करते तब तक हम स्वतन्त्र नहीं हो सकते यदि हिन्दु चाहें तो वे पंचम कहलाने वालों को जो अधिकार वे स्वयं अपने लिये चाहते है उन्हें भी अपनी तरफ से दे अपील थी, कि अन्त्यंज इसे हृदय से ग्रहण करें और गुणों से हरिजन बनें। गांधी पर लगे आरोपों प्रत्यारोपों से यह ज्ञात करना आवश्यक है कि अम्बेडकर की दलित अवधारणा क्या है ?

दलित : अम्बेडकरवादी अवधारणा :

अम्बेडकर ने बहिष्कृत भारत में दलित शब्द को व्यापक तरीके से सुपरिभाषित किया उनके मत में दलित, पददलितों के शोषण, दमन और पार्श्व की स्थिति को दर्शाता है जिस पर ऊपरी जाति एंव ब्राह्मणवादी व्यवस्था ने सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अधिपत्य स्थापित किया। अम्बेडकर ने शब्द का प्रयोग प्रायः नहीं किया उन्होंने बदलते सन्दर्भो और परिवेश के अनुसार दलितों के लिये अलग–अलग शब्दों का प्रयोग किया। उदाहरणः औरपनिवेशिक राज्य के सम्पर्क के दौरान उन्होंने डिप्रैस्ड क्लास शब्द का प्रयोग किया। सवर्ण हिन्दुओ को सम्बोधित करते समय वे बहिष्कृत शब्द का प्रयोग करते थें राजनिति के अखाड़े मे उन्होंने शैलयूल्डकास्ट श्रेणी का प्रयोग करना ही उचित समझा। 1942 में दलितों को वर्गीय सारुपयता देने के लिये उन्होंने शैडयूलड कास्ट फैडरेशन नामक दल स्थापित किया। जिस का मुख्य उद्देश्य सामाजिक विसंगतियों का दूर करके समतावादी समाज की स्थापना करना था। अन्त मे इस सामाजिक संस्था को राजनैतिक रंग देने के लिये उन्होंने पददलित शब्द का प्रयोग किया। जिसका अभिप्राय हिन्दु सामाजिक व्यवस्था के पांच नीचे कुचला हुआ था।

महात्मा गांधी की तरह अम्बेडकर ने भी दलित उद्वार रुचि दिखलाई। उन्होंने जाति व्यवस्था के असमानता पर आधारित कठोर वर्ण आश्रम और पूर्वजन्म के सिद्वांत के विरुद्व टक्कर ली। उन्होंने कहा कि जब तक जाति व्यवस्था का निवारण नहीं हो जाता देश में एकता नहीं स्थापित हो सकती। अम्बेडकर का विचार था कि अस्पृश्यों की समस्या को सामाजिक समस्या कहना गलत होगा। यह एक राजनैतिक समस्या है।

बी.आर.अम्बेडकर ने कहा :जातिभेद को देश के लिये घातक बना कर कहा कि जाति भेद के उदभावक और प्रचारक हिन्दुओं के वे धार्मिक ग्रन्थ हैं तो हिन्दु समाज में अपना पवित्र स्थान बनाये हुये हैं। अतः जब तक हिन्दुओं को उन पर से विश्वास नहीं हटेगा तब तक जाति भेद का पूर्णतय उच्चेश नहीं हो सकता । उन्होंने कहा कि हिन्दु अपनी समाज व्यवस्था को पवित्र मानते हैं वे वर्ण व्यवस्था को ईश्वरीय विधान समझते हैं इसलिए वर्ण व्यवस्था के पवित्र और ईश्वरीय विधान होने की जो भावना लोगों के मन में बैठा दी गई है उसे नष्ट करना आवश्यक है। यह बात तभी हो सकेगी जब आप बेदों और शास्त्रों को मानना छोड़ देंगे'।

इस प्रकार अम्बेडकर जातिप्रथा से अत्याधिक घृणा करते थे और उसके मूल जड़ वर्णाश्रम व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फैंकना चाहते थे। अम्बेडकर ने अस्पृश्यता को एक घणित प्रवृत्ति कहा और गुलामी का दूसरा नाम बनाया है। उनके 'अस्पृश्यता किसी को छूने से अपवित्र होने का विश्वास है। तथा स्थाई अनुवांशिक कलंक है जिससे छुटकारा नहीं पाया जा सकता है'।

वे कहते थे कि कोई भी जाति अपनपा आत्मसम्मान खोकर ऊपर नहीं उठ सकती। अगर वास्तव में अस्पृश्यता का निवारण करना है तो उन्हे सामाजिक व्यवस्था में स्वतन्त्र नागरिकों के समान समझना चाहिये, अस्पृश्यता ने अस्पृश्यों को हिन्दुओं को और आखिर में राष्ट्र को ही नष्ट कर डाला है। अगर दलित वर्ग आत्म सम्मान और स्वतन्त्रता प्राप्त कर लें तो वह भी राष्ट्र को समृद्ध बनाने में सहायक हो सकते है। अगर अस्पृश्यों की अत्याधिक शक्ति तो कि वह स्वयं को अस्पृश्यता के कलंक से हटाने के संघर्श में नष्ट कर रहे है बचा ली जाती है तो वह स्वंय को मानव कहलाने के लिये अन्य धर्म में प्रवेश न करते। महात्मा गांधी ने वर्ण व्यवस्था को बनाये रखकर दलित उद्वार की रुपरेखा तैयार की जबकि अम्बेडकर वर्णव्यवस्था को ही दलितो की दयानीय स्थिति को द्योतक मानते थे। इसी प्रकार दलित शब्द की परिभाषाओं में भी वर्ण, जाति और अस्पृश्यता के प्रयोग पर पश्रचिन्ह लगा दिया है। और हमें यह सोचने पर मजबूर कर दिया है कि आखिर वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था में अस्पृश्यता कैसे विद्यमान थी इस सन्दर्भ को ध्यान में रखते हुये वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था व अस्पृश्यता का आगामी भाग में संक्षेप में वर्णन किया गया हैं। इससे दलितों के ऐतिहासिक प्रक्षेप पथ की जानकारी भी अपलब्ध होगी।

वर्ण व्यवस्था :

वर्ण व्यवस्था से पहले वर्ण षब्द का अर्थ जानना आवश्यक है। वर्ण षब्द का प्रयोग ऋगवेद में (4000बी.सी.) में सबसे पहले प्रयोग किया गया और प्रारम्भ में केवल आर्य और दास दो वर्णों का ही वर्णन था। सेनार्ट के अनुसार आर्यों ने वर्ण शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम आर्य वर्ग ओर दास वर्ग के लिए किया हैं।[45] इस ऋग्वेद में समाज के तीन व्यवस्थाओं में विभाजन का भी वर्णन है : ब्रह्मा, (पण्डित) क्षात्र (योद्धा) और विस (सामान्यजन), चौथी व्यवस्था शुद्र का वर्णन नहीं है। यद्यपि आर्यों के द्वारा घृणा किये जाने वाले समूहों अयोग्य, चाण्डाल तथा निशाद शब्दों का वर्णन मिलता हैं।

यदि वर्ण शब्द की व्युत्पति देखें तो यह शब्द संस्कृत के 'वृ' धातु से निससृत हुआ हैं। वर्ण शब्द विभिन्न धातुओं से बन सकता है जिनके अर्थ भित्र–भित्र हैं। वर्ण के प्रमुख लाक्षाणिक अर्थों, यथावयवसायों, गुणों, सामाजिक परिस्थितियों या कर्त्तव्यों के वर्णन करने के रुप में लिया जा सकता है, वर्ण का अर्थ चुनना या स्वीकार करना भी हैं। जिसे व्यवसाय के चुनावों के

सन्दर्भ में लिया गया है ऋगवेद में पुरुश सूक्त में वर्ण शब्द प्रयुक्त नहीं हुआ बाद के ग्रन्थों में इसका प्रयोग स्पश्टः समाज के आन्तरिक सामाजिक विभाजन वर्ण व्यवस्था के लिऐ हुआ है। ऋगवेद में वर्ण शब्द का अर्थ रंग से लिया गया है डा. घुयै तथा मुईयर के अनुसार वर्ण शब्द आर्यों के सफेद तथा दासों के काले रंग के भेद के लिऐ किया गया है। तथा हट्टन ने भी वर्ण का अर्थ रंग मानते हुऐ ब्राह्माण सफेद, क्षत्रिय लाल, वैश्य पीले तथा शुद्र काले रंग के होते है। उल्लेखनीय है कि यहां वे मूल आदिवासियों को आर्य वर्ग का शत्रु समझते थे और उनके लिए ऋग्वेद मे दास या दस्यु शब्द का प्रयोग होता हैं ।

जाति व्यवस्था का अर्थ और स्वरुप :

समय–समय पर इतिहासकारों, भारतीय शास्त्रियों, जनगणना आयुक्तों, समाज शास्त्रियों, मानवशास्त्रियों, एंव विद्वानों ने जाति व्यवस्था का अध्ययन किया है और अपने–अपने दृष्टिकोण प्रस्तुत किये है। जाति की व्यापकता एंव महत्व बनाते हुऐ भारत जातियों एंव सम्प्रदायों का परम्परागत स्थल माना जाता है । ऐसा कहा जाता है, कि कहां की हवा में भी इससे अछूते नहीं है यहां मे मुसलमान तथा ईसाई भी इससे अछूते नहीं है जाति को अंग्रेजी मे कास्ट कहते है। जो पुर्तगाली षब्द 'कास्टा' से बना है तथा जिस का अर्थ प्रजाति, नम्र या भेद से लगााय जाता है। जाति शब्द का उल्लेख 1665 में ग्रेसिया डी और टो नामक विद्वान ने किया उसके बाद फांस के अल्बे डुवाये ने इस का प्रयोग प्रजाति के सन्दर्भ में किया। वास्तव में जाति शब्द की उत्पति जन में कतिन् प्रत्यय लगाकर हुई है जिसका अर्थ है जन्म–जाति एक विल्कुल भित्र सामाजिक व्यवस्था है जिसमें कुछ नियंत्रणों के अर्न्तगत प्रत्येक व्यक्ति को अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता है । जाति व्यवस्था जन्म से व्यक्ति को एक विषय सामाजिक सिथिती प्रदान करती है जिसमें आजीवन कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

जातिवाद की धारणा में हिन्दु समाज में अछुतो का दर्जा निम्र रहा है। वे सदियों से इस अवस्था में जीते आ रहे है। सवर्ण हिन्दु किसी अछूत को छूना पाप समझते थें। सवर्ण हिन्दु उन्हें जानवरों से बदतर समझते थे। वे अछूत पैदा हुये अछूत बनकर ही जीते रहे और मर कर भी इस पैशाचिक प्रथा से मुक्ति न पा सके। जाति के बुनियादी नियम क्या है ? जाति प्रथा जिन खतरनाक सिद्धान्तों पर आधारित है उससे लोग मानसिक कुंठा का अनुभव करते हैं। जाति व्यवस्था के कारण बदलती परिस्थितियों के अनुसार व्यवस्था और काम धंधे में परिवर्तन करना असंम्भव होता है। इससे बेकारी की समस्या तीव्र होती है साथ ही यह विश्वास उत्पत्र होता है कि यह सब नियति द्वारा तय है और इसमें परिवर्तन असम्भव है।

डा. मजूमदार और मदान के अनुसार जाति व्यक्तियों का एक ऐसा वर्ग है जिसमें व्यक्ति की स्थिति में परिवर्तन होने का कोई प्रश्न नहीं होता यह अपने आप में एक बन्द वर्ग है जो सदा अपनी ही जाति से जुड़ा रहता है, लकिन मजूदार का सिद्वांत काल्पनिक और ऐतिहासिक तथ्यों के अनुकूल नहीं है, इसमें विभित्र वर्णों विशेषकर गैर ब्राह्माणों और ब्राह्माणों के बीच स्पष्ट नस्लीय विभाजन के आधार बनाया गया है किन्तु इसका कोई ऐतिहासिक साक्ष्य नहीं मिलता जिससें कम से कम ब्राह्माणों, क्षत्रियों, वैश्यों के बीच किसी नस्लीय भेद का आभास मिलता हो साथ ही आज भारत में नस्लीय विभाजन जाति के आधार पर नहीं बल्कि क्षेत्र के आधार पर भी स्पष्ट होता है।

जे.एच.हट्टन ने जाति व्यवस्था की उत्पत्ति के काराणां का पता लगाने के लिये ऐसे आदिवासी लोगों की संस्कृति का अध्ययन करने पर जोर दिया है। जो सभ्यता और ब्राहमण सम्बन्धों के प्रभाव से मुक्त हो रही हो। ऐसे लोगों के उदारहण के रूप में उन्होंने नागा जनजाति के कुछ विशेष समूहों को लिया है। इन पर हिन्दु, बौद्ध और इस्लाम धर्म का प्रभाव नहीं पडा है और न ही इनमे आवश्यक है। जो जाति व्यवस्था की उत्पत्ति पर प्रकाश डालती है।

यद्यपि मानवशस्त्री दृष्टि से हट्टन का सिद्धान्त काफी तर्क संगत प्रतीत होता है। किन्ही ऐतिहासिक दृष्टि से इसे निर्विवाद सत्य नहीं माना जा सकता। भारतीय समाज की जाति व्यवस्था सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक रूप से एक जटिल समस्या है। व्यवहारिक रूप से यह व्यवस्था एक संस्था है। जो सभी सम्बन्धित लोगों को भारी कठिनाईयों में डाले हुये है। इस संस्था की उत्पत्ति किसी निश्चित काल में न होकर एक लम्बी अवधि में ही इसका विकास हुआ होगा। जाति व्यवस्था एक उप विकासीय प्रकिया का परिणाम हैं हजारों वर्षों के विभित्र कारकों के संयुक्त प्रभाव के फलस्वरूप आत्मा, धर्म, व्यवसाय या आर्थिक कारण ब्राहमणों के प्रयत्न विभित्र जनजातीय समूहों को पृथक कारण आदि कारकों ने जाति व्यवस्था के उदभव एवं विकास में योगदान दिया। संक्षेप में जाति के उदय के लिए प्रस्तुत किये गये सभी सिद्धान्तों में व्यवहारिक सच्चाई प्रतीत होती है। अर्थात विद्वानों ने जिन विभित्र परिस्थितियों पर प्रकाष डाला है। इन सबने मिल जुल कर ही इस जटिल समाजिक व्यवस्था की नींव रखी होगी। यद्यपि भारतीय समाज में शोषण के मूल में जाति प्रथा ही रही है। किन्तु यही केवल एक मात्र शोषण का कारण नहीं रही। पौराणिक आख्यानों में अनेक ऐसे उदारहण प्राप्त होते है। जिन्होंने अपनी शक्ति आत्म विष्वास तथा बुद्धिकोश से शोषण का प्रतिकार किया एवं तथाकथित निम्र जातियों के सदस्य होकर भी वे समाज के उच्च पदों पर आसीन हुये। इसमें सर्व प्रचलित उदारहण कुन्ती पुत्र कर्ण का दिया जा सकता है। सामाजिक दृश्टि से कर्ण का सार्थी पुत्र होना ही प्रचार में था इसी आधार पर उसे राजपुत्रों के साथ शिक्षा ग्रहण करने से वंचित किया गया। किन्तु अपनी शक्ति तथा नीतिबल से अन्ततोगत्वा कौरव पक्षों के सेनापति का पद ग्रहण किया। इस प्रकार राजसत्ता जिसके भी अधिकार में रही उसी ने ही दूसरे वर्ग का शोषण किया।

मनुस्मृति में शुद्रों के प्रति जो अन्यायपूर्ण बातें कही गई है। इसमें यह बात भी स्पष्ट हो जाती हैं ब्राहमण विद्वानों ने समान्य रूप उच्च जातियों के लाभ के लिये ऐसे नियम बनाये जिनके द्वारा निर्बल व्यक्तियों का शोषण किया जा सके। शोषण का एक मुख्य कारण आर्थिक स्थिति भी है। शोषण जातियों में भी जो लोग आर्थिक रूप से स्मपत्र थे वे इस तथाकथित वर्ण व्यवस्था पर आधारित शोषण से बचे रहे तथा सवर्ण जातियों में भी जो लोग निर्धन थे। उनका शक्तिषाली व्यक्तियों द्वारा शोषण रहा। सामाजिक दृष्टि से आर्य अपने आपको श्रेष्ठ समझते थे। यही करण है कि अनार्यो पर विजय प्राप्त कर लेने के उपरान्त उन्होंने स्वयं को द्विज और अनार्यो का षुद्र कहा। शोषण का मुख्य आधार मनोवैज्ञानिक कारण भी है। षुद्रों तथा पिछडी जातियों को सवर्णों ने बार बार यह याद दिलाया कि अस्पृश्यता ही उनकी नियति है। पिछडी जातियों अपने अज्ञान के कारण यह समझने लगी कि वे सचमुच पिछडे हुये है। उन्होंने अपने नियति को स्वीकार कर लिया कि अपने पूर्व जन्म के कर्मों के कारण वर्तमान समय में वे अस्पृश्यता की श्रेणी में रह रहे हैं। यदि उन्होंने इस जन्म में भी शास्त्र के प्रवक्ता ब्राहमणों की सेवा करके अपने पाप धो नहीं डाले तो वह अस्पृश्य बना रहेगा। इस भावना से भयभीत हो कर वे सदा उच्च वर्गों के अत्याचारों को सहते रहे। अब प्रश्न उत्पत्र होता है। कि अस्पृश्यता का उदगम कैसे हुआ?

निष्कर्ष

यद्यपि दलितों की समस्या सुलझाने के लिये तथा उनको अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने के लिये समय समय पर अनेक सुधारकों जैसे बुद्ध, ज्योतिराव फूले, रामास्वामी, पैरियार, रानाडे,

विवेकानन्द तथा विभिन्न धर्मों, बुद्ध धर्म, जैन धर्म, इस्लाम धर्म, और सिख धर्म के अनुयायियों ने कार्य किये तथा इनके प्रयत्नों से दलितों में भी काफी जागृति आई है। इसके अतिरिक्त कुछ धार्मिक व सामाजिक आन्दोलनों जैसे आर्य समाज तथा ब्रह्म समाज के माध्यम से भी अस्पृश्यता तथा जाति प्रथा की समस्या दूर करने का प्रयत्न किया गया। कुछ संगठनों तथा राजनैतिक दलों के नेताओं ने भी दलितों को राजनैतिक वर्चस्व प्राप्त करने के लिये प्रेरित किया किन्तु दलित उद्धार में गांधी और अम्बेडकर की भूमिका अद्वितीय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अम्बेडकर, बाबा साहेब, राईटिंग्ज एण्ड स्पीचेज, वाल्यूम 1, गवर्नमेन्ट आफॅ महाराष्ट्र, बम्बई, 1979
2. अम्बेडकर, बी.आर., व्हाट कांग्रेस एण्ड गांधी हैव डन टू द अनटच्चैब्लस, ठक्कर एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1946
3. अवस्थी, मोहन लाल, "अम्बेडकर एण्ड गांधी", आशा कौशिक, गांधी चिंतन तुलनात्मक परिपेक्ष, रूपा आफसैट प्रिंटर्ज, जयपुर, 1995
4. ओम वेदत्त गेल, दलित एण्ड डेमोकेटिक रिव्लयूशन : डा अम्बेडकर एण्ड दी दलितस् मूवमेन्ट इन कलोनियल इण्डिया, सेज प्रकाषन, नई दिल्ली, 1994
5. ऐन्ड्रूज, सी.एफ., महात्मा गांधी हिज लाईफ एण्ड आईजियाज, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली 1995
6. कीर, धनंजय, डा.अम्बेडकर : लाइफ एण्ड मिशन, पापूलर प्रकाशन नई दिल्ली, 1996
7. कदर्म, जय प्रकाश, अम्बेडकरवादी आन्दोलन : दिशा और दशा, संगीत प्रकाशन, दिल्ली, 1991
8. कदर्म, जय प्रकाश, जाति : एक विमर्श, मुहिम प्रकाशन, हापुड, 1999
9. कपाडिया, प्रेम, हम दलित, सोषल एक्शन ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1994
10. किशोर, राज, हरिजन से दलित, बाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995
11. किशोर, राज, जाति कौन तोडेगा, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 1998
12. कोठरी, रजनी, कास्ट इन इण्डियन पोलिटिकस, ओरिएन्ट लांगमैन, नई दिल्ली, 1979
13. कृपलानी, जे.बी., गांधीयन थॉट, ओरिएन्ट लांगमैन, नई दिल्ली, 1997
14. कृपलानी, कृश्ण, गांधी : एक जीवनी, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1997
15. कृष्ण, आशा, अम्बेडकर एण्ड गांधी इमैनीस्पेटर एण्ड अनटच्चैब्लस इन माडर्न इण्डिया, हिमालय प्रकाशन, दिल्ली, 1997
16. ठाकुर, केशव कुमार, भारत में अंग्रेजी राज के दो सौ वर्ष, आदर्श हिन्दी पुस्तक, इलाहाबाद, 1968
17. दीवान परस, पाम राम दूत, कान्सटीटियूशन आफॅ इण्डिया, स्टेलिंग प्रकाशन, नई दिल्ली, 1979

www.ijpd.co.in